न्यायिक सक्रियता कितनी विचारणीय कितनी चिन्तनीय

हाल के दिनों में न्यायपालिका ने पहल करते हुए दो दिशाओ में सक्रियता दिखाई 1 भारतीय राजनीति के धार्मिक जातीय आपराधिक जैसे सुविधाजनक मार्ग पर आक्रमण करके तथा 2. भारतीय राजनीति के सुविधाजनक अपराध नियंत्रण को कटधरे में खड़ा करकें । दोनों ही पहल अभूतपूर्व है और न्यायिक सक्रियता पर गंभीर विचार मंथन की आवश्यकता महसूस कराती है।

यह सत्य है कि भारतीय राजनीति ने हमेशा ही सुविधाजनक मार्ग पर जाने में न न्याय अन्याय की चिन्ता की न उचित अनुचित की। राजनीति का सम्प्रदायीकरण और जातीय उपयोग तो स्वतंत्रता पूर्व से ही लगातार जारी था जिसमें स्वतंत्रता के बाद भी कोई कमी न करके उसका विस्तार ही किया गया । स्वतंत्रता के पूर्व ही साम्प्रदायिकता के दो ठेकेदार मुसलमान और हिन्दु के नाम पर राजनैतिक लाभ उठाने के उद्देश्य से समाज का साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण करने कराने की लगातार कोशिश कर रहे थे तो एक तीसरे ठेकेदार भी बहती गंगा में हाथ धोने के उद्देश्य से जातीय ध्रुवीकरण का प्रयास करने लगे। तीनों ही समूहों के साझा शत्रु थे गॉधी जी जो ऐसे किसी भी ध्रुवीकरण को सिरे से नकारते भी थे और स्वतंत्रता में बाधक भी मानते थे। गॉधी से मुक्त होते ही तीनों समूह स्वतंत्र हो गये। न किसी गॉधीवादी की समाज में इतनी पकड़ थी न कोई स्वतंत्र सोच। परिणाम हुआ कि कांग्रेस पार्टी ने साम्प्रदायिक मुसलमानों तथा जातीय उन्मादी अम्बेडकर के साथ समझौता कर लिया तो साम्प्रदायिक हिन्दुओं ने राष्ट्रवाद को ढाल बनाकर अपनी राजनैतिक रोटी सेकनी शुरू कर दी। गॉधीवादी ही एकमात्र थे जो इसका विरोध कर सकते थे किन्तु गॉधीवादी इतने भोले भाले और शरीफ थे कि वे आसानी से साम्यवादियों के चंगुल में फंस गये और वे भी मुस्लिम अम्बेडकर वादी गिरोह के सर्मथक होते चले गये।जातीय साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण के बाद भी सभी पक्ष आपराधिक गठजोड़ से सतर्क और सावधान थे। साम्प्रदायिक हिन्दू समूह भी चरित्र को विशेष महत्व देता था और साम्प्रदायिक मुस्लिम अम्बेडकरवादी समूह भी । किन्तु जब धीरे –धीरे नेहरु अम्बेंड़कर ने मिलकर सर्वशक्तिमान संसद और शक्ति विहीन समाज के बीच ध्रुवीकरण करना शुरु किया तो राजनीति धीरे –धीरे व्यवसाय बनती चली गई। राजनीति के व्यवसायीकरण से सिर्फ संघ परिवार ही अन्त तक लड़ता रहा । गॉधीवादी तो इससे निर्लिप्त थे ही । वे इस राजनीति के व्यवसायी करण को राकना चाहते हुए भी असहाय थे क्योकि उनकी जडो मे बैठे साम्यवादी दिन रात उन्हें संघ विरोध सें आगे जाने से रोकते रहते थे । किन्तु संघ परिवार की एक बड़ी समस्या थी कि वे पूरी तरह सर्वशक्तिमान संसद और शक्ति विहीन समाज के पक्षधर रहे। कांग्रेस से भी ज्यादा । यहॉ संघ परिवार का अन्य दलों के साथ समझौता हो जाता था। डा0 लोहिया तथा जयप्रकाश जैसे सर्वशक्तिमान संसद के विरोधियों को सबने मिलकर एक किनारे कर दिया।पहले डा0 लोहिया ने इस धारणा से आंशिक समझौता किया और बाद में जयप्रकाश सन् सतहत्तर में इस धारणा से परास्त हुए । सर्वशक्तिमान संसद की धारणा ने राजनीति के व्यवसायीकरण से आगे जाकर राजनीति के अपराधी करण की दिशा पकड़ी । पहले तो अपराधी तत्वों ने राजनेताओं की सहायता तक ही स्वंय कों सीमित किया, किन्तु धीरे–धीरे वे स्वंय राजनीति में सक्रिय होने लगे। यह स्पष्ट है कि संघ परिवार ने राजनीति के अपराधीकरण के विरूद्ध अन्त तक संघर्ष किया किन्तु अंत मे उसने भी हार मानकर राजनीति के अपराधीकरण से समझौता कर लिया।

सर्वशक्तिमान संसद और संसदीय लोकतंत्र के अपराधियों से समझौते के विरूद्ध पहला मोर्चा खोला टी एन शेंषन ने । चुनाव आयोग को माध्यम बनाकर। न्यायपालिका और चुनाव आयोग नाम से दो ही ऐसी संवैधानिक शक्तियां थी जो कुछ बची हुई थी। चुनाव आयोग की शक्तियां सीमित थी और न्यायपालिका की संसद के समकक्ष। समाज बेबस और लाचार था । पंडित नेहरू ने न्यायपालिका को भी बेहद कमजोर कर दिया था। धीरे धीरे उसकी संवैधानिक शक्तियॉ सीमित की जा रही थी। इंदिरा गॉधी के काल सें ही न्यायपालिका ने कुछ कुछ जगना शुरू किया। उसने एक एक करके संसद सर्वोच्च को लोकतंत्र का पाठ पढाना शुरू किया। राजनैतिक दल उस समय तक इतने बदनाम हो चुके थे कि यदि कोई असंवैधानिक तरीके से भी इनकी स्वेच्छा मे कटौती करता तो वह उसे भगवान से नीचे नही दिखता था । ऐसे ही समय का लाभ उठाकर चुनाव आयोग तथा न्यायपालिका ने कुछ कदम उठाये जिनका जनता ने भरपूर स्वागत किया। उसी आक्रमण की एक कडी के रूप मे सर्वोच्च न्यायालय का वर्तमान निर्णय भी देखा जाना चाहिये जिसके अनुसार जेल मे बन्द व्यक्ति के चुनाव लडने तथा संसद या विधान मंडल का प्रतिनिधित्व करने के प्रयत्न पर रोक लगाई गई है। साथ ही दो वर्ष तक के दण्ड योग्य अपराध सिद्ध जन प्रतिनिधि का प्रतिनिधित्व समाप्त मानने का भी आदेश लागू हो गया है।

राजनैतिक दलो मे सतर्कतापूर्ण वेचैनी है। समर्थन के साथ साथ किन्तु परन्तु का भी सिलसिला जारी है। यदि ऐसा कोई व्यक्ति बाद मे निर्दोष सिद्ध होता है तो उसे बीच के कालखंड के लिये अयोग्य रहना उसके साथ अन्याय तो नही है यह प्रश्न बार बार उठाया जा रहा है। प्रश्नकर्ता यह भूल जाते है कि जन प्रतिनिधित्व उनका कोई मौलिक अधिकार नही हैं । भारत मे किसी भी व्यक्ति को जन प्रतिनिधि बनने की न स्वतंत्रता है न अधिकार। जन प्रतिनिधित्व तो जनता की अमानत है जिसे वे अपना अधिकार मान बैठे है। कुछ मतदाता उस व्यक्ति के नाम पर प्रस्ताव देते है जिस प्रस्ताव पर उस व्यक्ति की सहमति मात्र होती है। यदि कोई मतदाता प्रस्ताव न दे तो वह व्यक्ति प्रतिनिधि नही हो सकता। प्रतिनिधित्व किसी भी रूप से उसका अधिकार नहीं। राइट टू रिकाल यदि कानून का रूप ले ले तो उसका अधिकार कहॉ जायेगा? आप जन सेवक है और जन सेवा आपका अधिकार नही बल्कि कर्तब्य मात्र है जिसे इन्होने अपना अधिकार मान लिया है। सर्वोच्च न्यायालय का यह निर्णय अपराधी नेता गठजोड पर एक भारी कुठाराधात है। यह अलग बात है कि यह गठजोड निर्लज्जता की सारी सीमाओं को तोडकर भी ऐसे जनहित के निर्णय के विरूद्ध कुछ सोचना शुरू करे जो संभावना दिखती है। जातीय रैलियों पर इलाहाबाद उच्च न्यायालय का निर्णय भी एक स्वागत योग्य कदम है । यद्यपि अभी उस निर्णय को उपर की अदालतो से भी गुजरना होगा । यदि ऐसा ही कोई निर्णय धर्म आधारित समूहो के खिलाफ भी आ जावे तो इस साम्प्रदायिक जातीय ध्रुवीकरण की गांधी विरोधी मुहिम से मुक्ति मिल सकती है। तब देश मे ऐसा लगेगा कि न्यायपालिका ने एक ऐतिहासिक पहल की है।

न्यायपालिका ने पिछले दिनो एक और पहल करते हुए फर्जी मुठभेडों को रोकने की पहल करते हुए असाधारण कदम उठाया जिसमे इशरतजहां फर्जी मुठभेड को आधार बनाकर पहल की गई। न्यायपालिका की इस पहल ने अपराधियो के हौसले बुलंद कर दिये। प्रारंभ से ही स्पष्ट था कि भारत मे कुछ अपराधियों के विरूद्ध फर्जी मुठभेड दिखाते हुये बिना न्यायालय मे प्रस्तुत किये ही मार देने की गैर कानूनी प्रक्रिया चलती रही है। कभी कभी तो कुछ बेगुनाह लोग भी इसकी आड मे मारे गये है किन्तु ऐसे लोगो की संख्या नगण्य ही है। अधिकांश ऐसे अपराधी ही मारे गये है। जिनके वास्तविक अपराधी होते हुए भी न्यायालय से निर्दोष प्रमाणित होने की संभावना बनी रहती है। इस संबंध मे यदि ठीक से देखा जाय तो ऐसे दुर्दान्त अपराधी दस दस बार न्यायालय से निर्दोष सिद्ध होकर आगे और अपराध करने का प्रमाण पत्र प्राप्त कर लेते है या पुलिस द्वारा किसी मुठभेड मे मार दिये जाते है जिनमे अनेक फर्जी होती है।

अपराधियो को दण्डित होना चाहिये यह एक मौलिक आवश्यकता है। उसे पुलिस दण्ड दे या न्यायालय अथवा कोई अन्य। यह संवैधानिक प्रक्रिया है मौलिक आवश्यकता नही। न्याय मौलिक आवश्यकता है और कानून वैधानिक प्रक्रिया। यदि न्याय और कानून के बीच दूरी बढती है तो कानूनों मे सुधार या संशोधन पर तो विचार संभव है किन्तु न्याय की परिभाषा नही बदल सकती। पिछले कुछ वर्षो से जब से न्यायपालिका ने न्याय की अपेक्षा कानूनो की मजबूती मे सक्रियता दिखानी शुरू की तबसे समाज मे और ज्यादा प्रत्यक्ष दण्ड के प्रति समाज का विश्वास बढा

। आज समाज मे हिंसा के प्रति विश्वास का बढना अकारण नही है। अपराधियो को दण्ड देने मे अकल्पनीय विलम्ब तथा दण्ड मे भी अपराधियों के निर्दोष छूटने की प्रबल संभावनाए। अभी अभी सर्वोच्च न्यायालय ने बार बालाओ के संबंध मे एक निर्णय दिया । निर्णय बिल्कुल ठीक है। सरकारे अनावश्यक ही कानून बनाकर दखल देती है। किन्तु निर्णय आने मे आठ वर्ष लगे । हाई कोर्ट के बाद सुप्रीम कोर्ट ने भी कई वर्ष लगाये जबकि यह एक माह से ज्यादा का काम नही था। ऐसी हालत मे समाज मे कानून पर से यह विश्वास घटा है तो यह कहीं न कहीं न्यायपालिका की गल्ती है जिनसे कानून की रक्षा को प्राथमिकता देकर न्याय की अनदेखी की। दुनियां जानती है कि गुजरात मे शान्ति स्थापित करने के लिये गैर कानूनी उपायो का सहारा लिया गया। विचारणीय प्रश्न यह है कि सब कुछ जानते हुए भी नरेन्द्र मोदी तीन तीन बार लगातार अधिक लोकप्रिय होते गये। यह जानते हुए भी कि मोदी एक तानाशाह है इसके बाद भी देश मे यदि मोदी को प्रधानमंत्री देखने की इच्छा यदि बलवती है तो यह लोकतंत्र के लिये एक बडा खतरा है जिसके प्रति या तो न्यायालय अचेत है या समझ नही पा रहा । न्यायपालिका को न्याय और कानून के बीच बढती दूरी का समाधान सोचना चाहिए न कि कानून का अन्ध समर्थन । किसी अपराधी का न्यायालय से निर्दोष सिद्ध होना कानून के समक्ष न्याय की पराजय है जो ऐसी फर्जी मुठभेडो की आवश्यकता के पक्ष मे जाती है। पंजाब जब उबल रहा था और न्यायपालिका ने भी अपने हाथ खडे कर दिये थे तब ऐसी फर्जी मुठभेंडो की कहांनिया आज तक हवा मे तैरती रहती है। नक्सलवादियों के संबंध मे भी कई घटनाए दबी होगी। लेकिन चाहे पंजाब हो या नक्सलवाद या कोई और। ऐसी घटनाओं के अतीत मे अपराधियों के न्यायालय से निर्दोष छूटने का इतिहास अवश्य मिलेगा।

इशरत जहां तथा तीन अन्य फर्जी मुठभेड मे मारे गये । न्यायालय अपनी भूमिका की समीक्षा करने को तैयार नही है कि उसकी भूमिका संदेहास्पद अपराधी और पुलिस के बीच तटस्थ की न होकर उसकी भूमिका न्याय मे सहायक की है जिसमे पुलिस भी सहायक है। न्यायपालिका ने आज तक कभी अपने को उस भूमिका मे न मानकर सिर्फ और सिर्फ कानून की संरक्षक मात्र बनाई रखी। यदि आम जनता का न्यायिक प्रक्रिया पर से विश्वास घट रहा है तो उसका दोषी कौन? क्या आज तक न्यायपालिका ने कभी सी बी आई से अथवा कोई न्यायिक एजेन्सी द्वारा जांच कराने की पहल की कि पिछले पांच वर्षो मे दुर्दान्त अपराधो मे निर्दोष सिद्ध अपराधियो मे से कितने प्रतिशत वास्तविक अपराधी थे और कितने प्रतिशत वास्तविक निर्दोष । यदि ऐसी जांच हो तो न्यायालय की आख खुल जायगी और लोकतंत्र बच जायगा अन्यथा यदि देश मे अव्यवस्था या तानाशाही का वातावरण बना तो न्यायपालिका भी अवश्य कटघरे मे खडी होगी।

प्रधानमंत्री को तीन माह मे निर्णय देना चाहिये और राष्ट्रपति को भी छ माह मे फांसी की सजा का निर्णय देना चाहिये। स्वागत योग्य कदम है । क्या यह उचित नहीं होगा कि सुप्रीम कोर्ट अपने लिये भी स्वतः एक समय सीमा धोषित करे । सुप्रीम कोर्ट को अपना काम छोडकर उत्तराचंल ट्रेजेडी की रिर्पोट लेना क्यो ज्यादा आवश्यक महसूस हुआ? क्या न्यायपालिका विधायिका की बदनामी का लाभ उठाकर स्वयं सर्वोच्च बनने का प्रयत्न नहीं कर रही? विधायिका यह प्रश्न नही उठा सकती किन्तु न्यायपालिका को इसके लिये स्वतः सज्ञान नही लेना चाहिये? विधायिका और अपराधियो का गठजोड केवल इसलिये हुआ कि विधायिका ने सारी शक्ति अपने पास समेट ली । यदि न्यायपालिका ने भी वैसा ही किया तो क्या न्यायपालिका अपराधी गठजोड नही होगा? विधायिका तो समाज के प्रति सीधे भी उत्तरदायी है । नयायपालिका किसके प्रति उत्तरदायी होगा? यदि सर्वोच्च नयायालय का कोई सर्वोच्च न्यायाधीश भ्रष्टाचार या मनमानी करने लगा तो क्या होगा? इन प्रश्नो का उत्तर स्वयं न्याय पालिका को ही सोचना चाहिये। लोकतंत्र मे यदि संसद सर्वोच्च का विचार घातक है तो न्यायालय सर्वोच्च भी कम घातक नही ।

फिर भी यदि विधायिका और न्यायपालिका की एक साथ साथ तुलना करे तो विधायिका दोषी है और न्यायपालिका मे सुधार संभव है। इसका अर्थ यह हुआ कि विधायिका पर लगने वाले अंकुश का स्वागत होना चाहिये । हम विधायिका की मनमानी का एक पक्षीय विरोध करते है। दूसरी ओर न्यायपालिका को हम सलाह मात्र दे रहे है कि सर्वोच्च बनने का प्रयत्न घातक है क्योकि लोकतंत्र मे जनता ही सर्वोच्च है न कि तंत्र का कोई भाग । देश मे यदि मजबूत प्रधानमंत्री की मांग उठती है तो यह मांग ही घातक है । यदि ऐसी आवश्यकता महसूस होती है तो यह न्याय की विफलता है। वर्तमान मे नरेन्द्र मोदी की लोकप्रियता का बढना एक खतरे की घंटी है जिसकी आवाज न सुनना न्यायालय के लिये भी घातक है। इस आवाज को किसी कानून से दबाना संभव नही। यह आवाज तो सशक्त लोकतंत्र से ही दब सकती है। जिसके लिये न्यायालय की भी भूमिका आवश्यक है।

ए टू जेड मे प्रसारित समीक्षा

रिलाइंस छतरी के अंतर्गत टी बी मे चौबीस घंटे तीसो दिन ए टू जेड समाचार चैनल प्रसारित होता है। जो लोग रिलांयस छतरी नही रखे है वे कम्पयूटर मे भी इंटरनेट पर यह कार्यक्रम देख सकते है। प्रत्येक शुक्रवार की शाम छ बजे से साढे छ बजे तक शनिवार रात आठ बजे से साढे आठ, रविवार शाम आठ से नौ तथा सोमवार रात आठ से नौ तक अलग अलग विषयो पर स्वतंत्र परिचर्चा आती है जिसमे प्रत्येक मे मै अवश्य शामिल हूँ ऐसी ए टू जेड वालो ने मुझे विशेष मान्यता दी है। प्रतिमाह कुल मिलाकर सोलह कार्यक्रम ए टू जेड पर आते है। जिसमे से आठ मौलिक तथा आठ उनके पुनः प्रसारण होते है। आप ए टू जेड पर ऐसे प्रसारण सुन सकते है। इसमे से चार प्रसारण तो मेरी बातचीत के होते है तथा चार स्थापित विद्वानो तथ श्रोताओ के बीच बहस के होते हैं । इस माह के प्रसारण मे स्वतंत्र बहस के चार विषय थे

1 जाति प्रथा जातिवाद, वर्ण व्यवस्था
2 हडताल चक्काजाम कितना समाधान कितनी समस्या
3 गांधी और सुभाष के मार्गो की तुलना
4 इशरत जहां फर्जी मुठभेड कितनी अपराध कितनी गैर कानूनी?

इन चार विषयो पर विभिन्न विद्वानो के बीच खुली बहस हुई जिसमे मै प्रत्येक मे शामिल था।

जातिप्रथा पर चर्चा मे मेरा मत था कि जाति प्रथा वर्ण व्यवस्था न कोई षणयंत्र था न ही कुप्रथा। गुण कर्म स्वभाव का आकलन करके ही चार वर्ण बनते थे। सामाजिक स्थिति का आकलन करके ही समाज मे अनुमानतः दस प्रतिशत ब्राम्हण बीस प्रतिशत क्षत्रिय तीस प्रतिशत वैश्य और चालीस प्रतिशत शूद्रो का चयन होता था। इन्ही वर्णो मे से कर्म के आधार पर जाति थी। वैसे तो प्रत्येक व्यक्ति अपने दैनिक क्रिया कलापो मे चारो वर्गो का काम करता है। किन्तु इन कामो को करते हुए भी उसमे किसी वर्ण की कुछ विशेष क्षमता होती है। इस विशेष क्षमता का आकलन करके ही उसे उस वर्ण का माना जाता है । पुरानी व्यवस्था मे प्रत्येक परिवार मे भिन्न भिन्न वर्ण के लोग होते रहे है जो आज तक है। इस तरह वर्ण और जाति का सीधा संबंध कर्म से था जन्म से नही।

कालांतर मे यह व्यवस्था रूढ हुई । अब जन्म के अनुसार वर्ण और जातियां बनने लगी और वर्ण तथा जाति के अनुसार कर्म निर्धारित होने लगे। यह एक विकृति थी किन्तु इतना होते हुए भी विशेष स्थिति मे वर्ण और जाति बदलती थी। मेरे पूर्वज महाराज अग्रसेन जन्म से

क्षत्रिय थे किन्तु स्वभाव से वे हिंसा के विरूद्ध थे। वे राजपाट भी नही चाहते थे। उनका वर्ण बदलकर क्षत्रिय से वैश्य हुआ । उनके वंशज वैश्य हुए । विशेष स्थिति में ऐसा संभव था। धीरे –धीरे सवर्णों की नीयत खराब हुई । सवर्णों ने वर्ण और जाति को पूरी तरह जन्मना कर दिया।फिर भी यह व्यवस्था लम्बे समय तक इसी तरह चलती रही ।किन्तु इस व्यवस्था में भयानक विकृति तो तब आई जब अवर्णों को भी इसी तरह जन्मना कर दिया। शूद्र कभी न अछूत थे न अवर्ण । वर्ण व्यवस्था के अर्न्तगत व्यवस्था थी कि अनुलोम विवाह मान्य है और प्रतिलोभ वर्जित । दूसरी बात यह भी थी कि महिलाओं का अपना न कोई वर्ण होता था न जाति । महिलाऍं उस वर्ण और जाति की होती थी जिस परिवार में वह जाती थी । उच्च वर्ण की लड़की निम्न वर्ण में जाना वर्जित था । फिर भी व्यवस्था तोंड़कर कोई लड़की निम्नवर्ण में गई तो उसकी संतान वर्ण शंकर होती थी जिसे दण्ड स्वरुप अवर्ण और उनमें से ही कुछ अति निषिध्द को अछूत मानते थे। समाज बहिष्कार से आगे दण्ड देना वर्जित था। इस व्यवस्था में एक भारी कमी थी कि एक बार गलती करने वाले की संतान को कभी मुक्त होने का प्रावधान नही था। यह जान बुझकर हुआ या षड़यंत्र था यह अलग शोध का विषय है किन्तु ऐसा हुआ और इस विकृति के भयंकर दुष्परिणाम हुए। स्वामी दयानंद ने खतरे उठाकर भी इस जन्मना जाति वर्ण को कर्मणा करनें के प्रयत्न किये। गॉधी ने इन प्रयत्नों को आगे बढ़ाया।जाति व्यवस्था टूटने लगी। छूआछत घटने लगी ।पंद्रह वर्ष की उम्र में ही आर्य समाज ने मुझे वैश्य से उठाकर ब्राम्हण बना दिया । मैं पण्डित बजरंग लाल बन गया। मैंने अपना पूरा जीवन ब्राहम्ण के रुप में बिताया । मेरे लड़के बाद में वैश्य बने। स्वामी दयानन्द या महात्मा गॉधी इस अन्याय को दूर करना चाहते थें। गॉधी के प्रयत्नों को अम्बेड़कर जी ने नकार कर जन्म अनुसार जाति व्यवस्था को मजबूत कर दिया। पुन; आज स्थिति है कि छुआछुत घट रही है,जातिप्रथा दम तोंड़ रही है और जातिवाद बढ़ रहा है। भारत में बढ़ता जातिवाद अम्बेडकर जी की देन है।उच्च वर्ण के जो लोग इस जाति व्यवस्था का मजा उठा रहे थे उस आनन्द में ही पॉच सात प्रतिशत अवर्णो ने समझौता करके हिस्सेदारी कर ली और श्रम के साथ भयंकर विश्वासघात किया । भविष्य में जब भी भारत मे ंश्रम और बुध्दि का तुलनात्मक विश्लेषण होगा तब अम्बेडकर जी द्वारा श्रम से विश्वासघामत के लिये उनका नाम काले अक्षरों में लिखा जाएगा।अब इसका सामाधन है समान नागरिक संहिता हो। जाति धर्म वर्ण के आधार पर किसी के साथ कोई भेदभाव न हो। श्रम और बुदि्ध के बीच का अन्तर घटे। सभी प्रकार के भेदभाव मूलक कानून समाप्त हो । जन्मना जायते शूद्र की व्यवस्था हो । क्योकि जब तक वर्तमान जन्मना जाति प्रथा का अंत नही होगा तब तक सामाजिक एकता संभव नही हैं। सामाजिक एकता को छिन्न भिन्न करने वाले अनेक कारको मे से जन्मना जाति प्रथा भी एक महत्वपूर्ण कारक है।

दूसरा विषय था हड़ताल और चक्काजाम । मेरा यह मत था कि हड़ताल या चक्काजाम करने का सबको संवैधानिक अधिकार प्राप्त है।किन्तु कराना पूरी तरह असंवैधानिक है। स्वतंत्रता के पूर्व तानाशाही से संघर्ष के समय यह एक अहिंसक शस्त्र था । स्वतंत्रता के बाद यह संगठित गिरोंहों द्वारा समाज को ब्लैक मेल करने का माध्यम बन गया है। स्वतंत्रता के बाद जो अधिकार तथा सुविधाऍं समाज के पास आनी थी वे राजनेताओं का एक गुट लेकर बैठ गया । तंत्र से जुड़ी अन्य ईकाइयॉ इन राजनैतिक गिरोहों से अपना हिस्सा मॉगती है। इनकी किसी भी समस्या का सम्बन्ध समाज से नही होता । कोई भी हड़ताल या चक्का जाम समाज के लिये नही होता न ही समाज इन्हें करता है। स्वतंत्रता के बाद सिर्फ जे0पी0 आंदोलन या अन्ना हजारे के आंदोलन ही समाज द्वारा समाज के लिये हुए अन्यथा अन्य सभी आंदोलन सुंविधाओं की छीना झपटी के लिये होते है। इसकी एक खास पहचान होती है कि जे पी या अन्ना आंदोलन अधिकारों के विभाजन के लिये था जबकि अन्य सभी आन्दोलन सुविधा विस्तार के लिये होते है।आपको अपनी गाड़ी का चक्का जाम करने का संवेधानिक अधिकार है।आप अपने सर्मथको को भी अपना काम बंद करने या चक्का जाम करने की मॉग कर सकते है किन्तु आपको मेरी गाड़ी का चक्का जाम करनें या कराने का क्या अधिकार है? यह तो सरासर गुण्डागर्दी है जिसके लिये न न्यायालय को फुर्सत है न किसी समाज सेवक को। सरकारों को इससे इससे कोई असुविधा नही होती । ये तो अन्दर अन्दर ऐसी हड़तालों को प्रोत्साहित करती है क्याकि कर्मचारियों की सुविधा वृदि्ध की मॉगे ही तो उनकी अपनी भी सुविधाओं की वृदि्ध का मार्ग खोलती है।चुनाव के पूर्व यह रस्सा कसी कुछ ज्यादा ही देखने को मिलती है क्योंकि यह वर्ष कर्मचारियों द्वारा अपनी मॉगे मनवाने का अच्छा अवसर होता है। सरकारे पहले तो कड़ाई करनें का नाटक करती है । किन्तु बाद मे कोई बीच का समझौता करके उसकी क्षति पूर्ति का सारा बोझ समाज पर टैक्स के रुप में डाल दिया जाता है।यह क्रम लगातार चलता रहता है।सरकारें कभी कभी निजीकरण का भी नाटक करती है।किन्तु आमतौर पर निजीकरण नही होता । निजीकरण सिर्फ कर्मचारियों के हितों पर ही कुठाराघात नही होता । निजीकरण तो सरकारों के अधिकारो में भी कटौती करता है।

मेरे विचार में तो ये चक्का जाम या हडताल कराने को पूरी तरह रोक देना चहिए श्री संतोस माखरिया ने एक प्रश्न किया कि किसी चक्का जाम से किसी असंबद्ध ब्यक्ति को क्षति होती है तो उसकी भरपाई कौन करेगा ? सरकार या हडताली ? किसी के पास कोइ उत्तर नही था। इस बात से अधिकांश लोग सहमत थे कि हडताल या चक्काजाम से किसी आम नागरिक को कोई बाधा नही होनी चहिए न ही उसका कोई बुरा प्रभाव उस पर पडना चाहिए जो आम तौर पर होता ही है । इस लिए हडताल या चक्काजाम कराने पर न्यायालय को सतर्क नजर रखनी चाहिये।

तीसरा विषय था गांधी या सुभाष चन्द्रबोस। कुछ बाते बिल्कुल स्पष्ट है।

1 तानाशाही से मुक्ति के लिए हिंसा या अहिंसा के मार्ग का विकल्प होता है। लोकतंत्र मे किसी भी रूप से सामाजिक हिंसा का सर्मथन उचित नही लोकतंत्र मे हमारे पास हिंसा या अहिंसा विकल्प के रूप में मौजुद नही होते।

2 स्वतंत्रता से पूर्व समाज में गांधी मार्ग की अपेक्षा सुबाष बाबू के मार्ग को अधिक सर्मथन था। काग्रेस पार्टी के भीतर भी सुभाष जी के मार्ग को ज्यादा सर्मथन था लेकिन गांधी का व्यक्तित्व सब पर भारी था।

3 गांधी और सुभाष के बीच मतभेद मार्ग तक ही सीमित थे। अंग्रेजो के विरूद्ध स्वतंत्रता के विषय मे दोनो एक मत थे।

4 यदि भारत किसी लोकतांत्रिक देश का गुलाम न होकर किसी साम्यवादी देश का गुलाम होता तो गाधी की अहिंसा सफल नही होती ।ऐसे अवसर पर तो हिंसा का ही मार्ग एकमात्र होता है।

5 भारत को स्वतंत्रता क्रांतिकारियों के मार्ग से मिली या अहिसंक मार्ग से, यह बहस आनवश्यक है। स्वतंत्रता के बाद समाज में एक ही मार्ग है और वह है अहिंसा का ।

6 सुभाष बाबू का भारत की स्वतंत्रता के लिये हिंसक या अहिंसक मार्ग में से एक चुनने का विकल्प था किन्तु हिटलर जैसे तानाशाहों से हाथ मिलाना उचित नही था। सुभाष बाबू का यह कहना तो और भी गलत था कि स्वतंत्रता के बाद भी दस बीस वर्षो तक भारत में तानाशाही होनी चाहिए।

7 गुलामी काल में सुभाष बाबू द्वारा जापान से भारतीय सैनिक उधार लेकर असम पर आक्रमण करना उचित नही था। उस आक्रमण में साठ हजार सैनिकों का उपयोग किया गया जिसमें पचपन हजार मर गये या मारे गये। मरने वाले सभी सैनिक भारतीय थे।जो जापान द्वारा बन्दी बनाये गये थे। सुभाष बाबू का यह कदम अदूरदर्शी था जिसमें इतने सैनिक गंवाकर सुभाष बाबू को पीछे हटना पड़ा।

8 सुभाष बाबू और गॉधी ने जीवन भर एक दूसरे का सम्मान किया । कभी दोंनों एक दूसरे के विरुदध खड़े नही हुए यधपि विचारधारा में जमीन ,आसमान का फर्क था।

स्पष्ट है कि उस समय जब जर्मन जापान आदि धुरी राष्ट्र मजबूत थे तब तो सुभाष बाबू के मार्ग पर कोई चर्चा संभव थी किन्तु अब सब कुछ स्पष्ट है। अब धुरी राष्ट्र परास्त हो चुके है , हिटलर मुसोलिनी का नाम गाली के समान लिया जाता है,। नरेन्द्र मोदी मे प्रधानमंत्री बनने योग्य सबसे अधिक गुण होते हुए भी उनकी हिटलर से तुलना सारे गुणो को धो देती है। लोकतंत्र के स्थान पर लोक स्वराज्य की तो चर्चा संभव है किन्तु तानाशाही की तो कल्पना भी नही की जा सकती , ऐसे समय में सुभाष बाबू तथा अन्य क्रांतिकारी सम्मान और श्रद्धा के तो पात्र हो भी सकते है तथा हैं भी किन्तु उस मार्ग का सर्मथन सिरे से गलत है। कुछ सिरफिरे संघी साम्यवादी ही इन महापुरुषों के नाम पर फिर से तानाशाही का सपना देख रहे है। अन्यथा कोई

भी देशभक्त अब लोकतंत्र कों उस दिशा में ढकेलने की कल्पना भी नही कर सकता । आश्चर्य की बात तो यह है कि कुछ वामपंथी तो नक्सलवाद के नाम पर र्वतमान व्यवस्था को सुभाष बाबू की राह से बदलने का भी प्रयास कर रहे है किन्तु संघ परिवार का तो ऐसा दुहरा चरित्र है कि स्वंयम तो कभी हिंसा नही करते किन्तु घर बैठे दूसरों को हिंसा के मार्ग पर चलने के लिये प्रोत्साहित करते रहते है। इस बहस में आचार्य पंकज ने जब यह प्रश्न दोंनो सुभाष भक्त वक्ताओं से तथा अन्य श्रोताओं से पूछा कि आप स्वयं अपने व्यक्तिगत आचरण में तो गॉधी के अहिंसक मार्ग को ही अपनाते हैं किन्तु दूसरों को हिंसक मार्ग का उपदेश देते हैं तो दोनो सुभाष भक्त उत्तर नही दें सके । आचार्य जी के इस स्पष्ट प्रंश्न का कोई संघ भक्त भी उत्तर नही दे पाया ।

स्पष्ट है कि गॉधी और सुभाष के प्रति हमारे मन में समान श्रद्धा है। हम अन्यं क्रांतिकारियों के त्याग के समक्ष भी नत मस्तक हैं। किन्तु यदि किसी ने सुभाष बाबू या क्रांतिकारियों के नाम पर स्वतंत्रता के बाद भी अपना राजनैतिक स्वार्थ पूरा करने का प्रयत्न किया तो हम ऐसे प्रयत्नों का भरसक विरोध करेंगें । हम वर्तमान लोकतांत्रिक अधिकारों में वृद्धि के पक्षधर है। किन्तु हम पुन; उनमें कटौती की तो बात सोच भी नही सकते । यदि स्वंय सुभाष बाबू भी आकर कहें तब भी नही।

आज दुनिया तानाशाही को छोडकर लोकतंत्र की लाइन पर बढ़ रही है । साम्यवाद ने परास्त होकर लोकतंत्र के पीछे चलना स्वीकार कर लिया है। इस्लामिक तानाशाह भी एक –एक करके ध्वस्त हो रहें है। मिश्र के लोकतांत्रिक ढंग से चुने गये मुर्सी नें जब तानाशाही की ओर कदम बढ़ाने शुरु किये तो वहॉ भी विरोध हुआ।अन्य इस्लामिक तानाशाहों पर भी संकट के बादल गहरा रहें है। ऐसे समय मे अमेरिका दुनिया की एक ध्रुवीय शक्ति बनने की दिशा में अग्रसर है। अमेरिका का विरोध बेमानी हो गया है। न नक्सलवाद सफल होगा न कट्टर इस्लामिक हिन्दुवादी कोई योजना। सुभाष बाबू या अन्य कान्तिकारीयो के नाम पर अमेरिका की बढती ताकत को चुनौती देना अपने समय और शक्ति का दुरूपयोग है। अच्छा यह होगा कि लोक स्वराज के नाम पर पश्चिमी पूॅजीवादी लाकतंत्र से भी अधिक अच्छी ब्यवस्था देने का प्रयास हो।हिटलर और मुसोलिनी के गुणगान के दिन लद गये ं। इसलिए परिवार ब्यवस्था गॉव ब्यवस्था को संवैधानिक आर्थिक प्रशासनिक अधिकार दिलाने की मुहिम चलानी चाहिए। यदि गॉधी के नाम से कोई नफरत हो तो आवश्यक नही ं। सुभाष बाबू के नाम पर ही विकेन्द्रिकरण अकेन्द्रिकरण का सर्मथन किया जा सकता है। मैं तो व्यक्तिगत रूप से इस मत का हूॅ कि अमेरिका या अन्य लोकतांत्रिक देशो कि आलोचना विरोध में अपनी शक्ति खर्च न करके लोकस्वराज्य के नाम पर इन देशो से आगे निकलने की मुहिम चलानी चाहिए ं।

चौथा विषय था इसरतजहॉ फर्जी मुठभेड

मैने प्रारंभ मे ही स्वीकार किया कि मुठभेड फर्जी थी। मेरा मत था कि किसी संवैधानिक इकाई द्वारा किसी समाज सिद्ध अपराधी को गैर कानूनी तरीके से हत्या कर देना अपराध है या गैर कानूनी यह महत्वपूर्ण प्रश्न है । मेरा मत था कि इशरत जहॉ फर्जी मुठभेड मे यदि मारे गये लोग अपराधी थें तो यह समाज के चिंता का विषय नही कि वे न्यायालय से दोष सिद्ध थे या नही । अब तक भारत की किसी भी इकाई ने इन्हे निर्दोष नही कहा है। यदि ऐसे अपराधियो की हत्या में कुछ कानूनी प्रक्रियाओ का पालन नही हुआ तो यह कानुनविद सरकार या न्यायालय के लिये विचारणीय है, समाज के लिये नही । इसके विपरीत यदि अपराधी गवाही के अभाव मे या विभिन्न कानूनी दांव पेंचो का लाभ उठा कर न्यायालय द्वारा निर्दोष धोषित होते हैं तब ऐसे निर्दोष घूमना समाज के लिये चिन्ता का विषय है। कानून न्यायालय अथवा सरकार भले ही कानून व्यवस्था के नाम पर अपनी पीठ थपथपा लें किन्तु यदि कानून की रक्षा के लिये न्याय की हत्या होगी और ऐसी हत्या बार बार होगी तो समाज तो चिन्तित होगा ही । हमे इस बात से कोइ मतलब नही की इशरतजहॉ सोहराबुद्दीन फर्जी मुठभेड में कानून की हत्या हुई । हमे इस बात से मतलब है कि देश के विभिन्न भागों मे न्यायिक निर्णयों मे आमतौर पर अपराधियो को निर्दोष धोषित करके न्याय की हत्या हो रही है जिसके प्रति न न्यायालय चिंतित है न सरकार ।

हमारा सुझाव है कि न्यायायपालिका सी बी आई को यह काम दे कि पिछले एक वर्ष में जधन्य अपराधो में कितनें प्रतिशत अपराधी दण्डित हुए और कितने प्रतिशत र्निदोष छूटे । दूसरा काम न्यायालय को यह करना चहिये कि एक न्यायिक अयोग बनावे जो विचार करे कि न्यायालय में विलम्ब के लिये सुप्रीमकोर्ट अपनी कार्य प्रणाली में क्या क्या सुधार करे । आयोग यह बतावे कि सुप्रीम कोर्ट न्यायिक आदेंशो और प्रशासनिक आदेंशो की सीमायें कैसे तय करे । यदि न्याय मे विलम्ब होगा और सुप्रीम कोर्ट सरकार के सडते अनाज या उत्तराखंड त्रासदी जैसे प्रशासनिक मुद्दो पर अधिक ध्यान देगा तो न्यायिक आदेशो में देंर होना स्वाभाविक है । सुप्रीम कोर्ट को विधायिका और कार्यपालिका के साथ साथ अपनी समीक्षा भी समय समय पर करते रहना चाहिये अन्यथा न्याय और कानून पर से समाज का घटता विश्वास अंततः लोक तत्र को कमजोर करेगा।

1 श्री सरताज इदरिशी करहॉ मउ उत्तरप्रदेश

प्रश्न–. ज्ञान तत्व 172 सोलह मार्च दो हजार नौ में अपने लिखा कि इस्लामिक विस्तार वाद कश्मीर में भारत के विरूद्ध युद्ध कर रहा है न कि पाकिस्तान। यह बात पूरी तरह गलत है इस्लाम सीमा विस्तार की जगह मत विस्तार पर ज्यादा विश्वास करता है । दूसरी बात आप ने कही हैकि इस्लाम संधर्ष में विश्वास करता है। आप ने यह बात कह तो दी किन्तु कोई उदाहरण नही दिया। कृपया उदाहरण देकर दोनो बाते स्पष्ट करें।

उत्तर– प्रसिध्द् लेखक अरुंधती तय ने एक लेख लिखा जिसमें अन्य बातों के अलावा कश्मीर मुद्दे पर भी कुछ सुझाव थे ।मैने ज्ञानतत्व 172 में उनके प्रश्नों के उत्तर दिये जिसमें कश्मीर संबंधी मैनें जो लिखा वह अंश पाठको को फिर जा रहा है ।उन्होने कश्मीर के विषय मे कहा कि यदि आवश्यक हो तो कश्मीर को स्वतंत्र करके या पाकिस्तान को देकर भी इस विवाद को खत्म कर देना चाहिये। कश्मीर का प्रश्न उलझा हुआ है। इस मुददे पर उनके विचार भिन्न होते हुए भी उनकी नीयत पर संदेह व्यक्त नही करते।

(1) कश्मीर पर भारत का अधिकार न्याय संगत न होकर विवादास्पद है। स्वतंत्रता के समय कई सौ रियासतो को भारत, पाकिस्तान या स्वतंत्रता का विकल्प चुनने की वैधानिक छूट दी गई थी। जूनागढ, हैदराबाद और कश्मीर भारत के साथ विलय के पक्ष मे न होकर अलग राह खोज रहे थे। जूनागढ तो जल्दी ही निपट गया किन्तु हैदराबाद और कश्मीर का मामला इसलिये कुछ जटिल था कि हैदराबाद का शासक मुसलमान और जनता हिन्दू थी जबकि कश्मीर का शासक हिन्दू और जनता मुसलमान थी। हैदराबाद पर भारत ने उपद्रव कराकर फिर आक्रमण कर दिया और जीतकर अपने मे मिला लिया तो दूसरी ओर पाकिस्तान ने कश्मीर मे उपद्रव कराकर आक्रमण कर दिया और जीतने की दिशा मे बढने लगा । हैदराबाद को तो अवसर ही नही मिला कि वह पाकिस्तान से सम्पर्क करे किन्तु कश्मीर के राजा को अवसर मिला और उसने भारत के साथ विलय कर दिया जिसे पाकिस्तान ने अस्वीकार कर दिया। भारत ने इस विलय के बाद भी संयुक्त राष्ट्र संध का जनमत संग्रह का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया किन्तु भारत लाख प्रयत्न करने के बाद भी कश्मीरी मुसलमानो का दिल नही जीत सका। इसके विपरीत पाकिस्तान कश्मीरी मुसलमानो को कट्टरता की दिशा मे लगातार बढाता रहा । जिसके परिणाम स्वरूप भारत को जनमत संग्रह से पीछे हटने के बहाने करने पडे । भारत को कश्मीर को अपने साथ बनाये रखने के लिये कई युद्ध करने पडे, खरबों रूपया उन्हे अतिरिक्त सहायता के रूप मे खर्च करना पडा, पूरी दूनिया मे कमजोर तर्क के कारण कई बार शर्मिन्दा भी होना पडा किन्तु उसने कश्मीर को अपने साथ बनाये रखने के बदले मे सब नुकसान सहा। गंभीरता पूर्वक विचार करने पर राष्ट्रीय चिन्तन तो कश्मीर को अपने साथ रखने के पक्ष मे दिखता है और मानवीय पक्ष कश्मीर पर झुककर भी समझोते के पक्ष मे रहता है ।

यह तो कश्मीर का सैध्दान्तिक पक्ष है किन्तु इसका व्यावहारिक पक्ष इसके ठीक विपरीत है । कश्मीर का टकराव दो राष्ट्रो के बीच का टकराव न होकर इस्लामिक विस्तारवाद से भारत का टकराव है। कश्मीर तो उक्त टकराव का एक माध्यम मात्र है। पाकिस्तान कश्मीर मे संघर्ष नही कर रहा । संघर्ष तो कर रहा है विश्व इस्लामिक मूवमेंट जिसमें पाकिस्तान इस्लामिक राष्ट्र और कश्मीर सटा हुआ होने से महत्वपूर्ण पार्ट है ।

यदि कश्मीर छोड दे तो टकराव थोडा आगे बढकर पंजाब या राजस्थान मे खिसक जायगा जो ज्यादा हानिकारक होगा। कश्मीर का टकराव न्याय अन्याय के बीच न होकर न्यायी और अन्यायी के बीच है जिसमें इस्लाम का विस्तारवाद एक खतरनाक पक्ष है और उससे लडना हमारी मजबूरी है। इस्लाम को मानने वाले बडी संख्या मे धर्म के विस्तार के लिये जान देने मे संतोष का अनुभव करते है क्योकि धर्म विस्तार के लिये प्राण देने पर उन्हें धार्मिक लाभ के साथ साथ जन्नत मे कुछ ऐसी भौतिक वस्तुऍ भी मिलने का आश्वासन है जो उनके लिये दुहरा आकर्षण का काम करती है। इसके ठीक विपरीत हिन्दू धार्मिक विस्तार से नफरत करता है । वह धर्म रक्षा के लिये तो कभी जान भी दे दे किन्तु विस्तार तो उसने सीखा ही नही । इस्लाम यह जानता है कि दुनिया मे कोई संस्कृति ऐसी नही जो किसी न किसी बहाने अनन्तकाल तक लड सके। बहुत वर्षो के बाद कही न कही हार थक कर समझौता उनका स्वभाव है । यही एक विश्वास है कि इस्लाम हमेशा संघर्ष को हर मोर्चे पर जिन्दा रखता है चाहे वह संघर्ष न्याय संगत हो या अन्याय पूर्ण । अफगानिस्तान, इराफ, इजराइल, रूस, कश्मीर चारो ओर तो उसने अनन्तकाल तक का संघर्ष छेड रखा है । ऐसे धोषित शत्रु को कश्मीर सौंपना हमारी भारी भूल मान ली जायगी। इसलिये भारत को चाहिये कि वह किसी भी स्तर से इस्लाम का यह धमंड चूर कर दे कि संघर्ष को लम्बा खींचकर वह जीत सकता है। इसके विपरीत उसे यह समझ मे आना चाहिये कि ताकत से परिस्थितियो को अपने पक्ष मे करने की आदत की पोल खुल चुकी है।

मैं स्वय पहले वैसा ही सोचता था जैसा अरून्धती जी कश्मीर के विषय मे सोचती है। धीरे धीरे मेरी धारणा बदली और उनकी नही बदली। इसका कारण भी मै समझता हूँ कि मै न तो किसी विचार धारा से प्रतिबद्ध हूँ न किसी गिरोह से धिरा हुआ हूँ किन्तु अरून्धती जी के सामने भिन्न परिस्थिति होने से उनकी कठिनाई हमे समझनी चाहिये। वे स्वतंत्र भी नही है और तटस्थ भी नही है । वे विचारक भी नही है। वे है सामाजिक समस्याओं पर संघर्ष करने वाले एक समूह की सदस्य। उनकी कोई मजबूरी भी हो सकती है। इन सबके आधार पर ही हम उनके कार्यो की समीक्षा करें।

आपको ज्ञानतत्व के इस उत्तर में क्या नही मिला?कश्मीर में तो अधिकांश लोग मुसलमान मत मानने वाले है। और इस्लाम संघर्ष में नही, ,मत परिवर्तन पर विश्वास करता है तो कश्मीर में संघर्षरत मुसलमान इस्लाम विरुध्द् काम करते है? यदि मत परिवर्तन करना है तो वे किसका मत बदल रहें है?मुट्ठी भर शेष बचे हिन्दुओं का ही मत बदलना शेष है या आतंक फैलाना ही मत परिवर्तन है? स्पष्ट है कि कश्मीर मे पाकिस्तान नही लड रहा । दुनियां के कटटर पंथी मुसलमान पाकिस्तान को भी अस्थिर किये हुए है और कश्मीर को भी। ऐसे ही कट्टर पंथी जब और ज्यादा अपनी जन्नत को पक्का करना चाहते है तो वे भारत के अन्य भागो मे भी आकर आतंक फैलाते है और शहीद हो जाते है। ऐसे आतंकवादी शहीद माने जाये या आतंकवादी यह प्रश्न खडा होता है। आपकी परिभाषा के अनुसार तो ऐसे लोग इस्लाम विरोधी भी है। आप विचार करिये कि आपको छोडकर अन्य कितने प्रतिशत मुसलमान ऐसे अराजक तत्वो को इस्लाम विरोधी मानता हैं । भारत का कितने प्रतिशत मुसलमान कश्मीर के संघर्ष को इस्लाम विरोधी मानता है?
इस्लाम सिर्फ संघर्ष में ही विश्वास करता है इसके कितने उदाहरण दूॅ। कश्मीर का संघर्ष कोई अकेला नही हैं। इस्लामिक देशों के बाहर जहॉ –जहॉ भी दारुल हरब देश है उनमें रहने वाले मुसलमान किस देश में शांति सें है?चाहे चेचन्या हो या चीन । यहॉ तक कि इराक ,इरान,पाकिस्तान और बंगला देश तक में ये अशांत है। अभी–अभी वर्मा के बौद्धों ने परेशान होकर इनका हल्का सा कत्लेयआम किया तो इन्होंने भारत में उसका बदला लिया । मैं तो चाहता हूँ कि आप इनका उत्तर दें जिससे मै अपनी पूरी बात कह सकूॅ। मैं पूरी तरह मोदी विरोधी हूँ। किन्तु मै एक बात के लिये मोदी का प्रशंसक हूँ कि उन्होंने गुजरात के मुसलमानों को तरीके से जीना सिखा दिया ।मोदी चुनाव नही जीत सकते किन्तु यदि आप लोंगों ने बढ़ चढ़ कर मोदी विरोधी प्रचार का नेतृत्व किया तो धर्मनिरपेक्ष हिन्दुओं की भी मजबूरी हो जाएगी ।समय को पहचानिए और उस आधार पर आगे रणनीति बनाइये।

2 – गजराज तोमर,कर्मपुरा दिल्ली

प्रश्न– आपका भेजा पत्र दिनांक 23/4/13 आज ही प्राप्त हुआ। वैसे पत्र पर 23/04/12 भूल से लिखा गया होगा । ज्ञान तत्व पाक्षिक कुछ माह से नही मिल रहा है। कारण मै नही बता सकता । इस पत्र के पूर्व्र मूझे आपका कोई भी पत्र नही मिला। मेरा मोबाइल न0–9811611192 है। आपके ज्ञान तत्व का पठन बहुत ही ज्ञानकारी होता है। इसके लिये आप बधाई के पात्र है कि लोगो को जीवन उपयोगी सटीक जानकारी आपसे मिलने के साथ साथ राजनैतिक सामाजिक धार्मिक ब्यापारिक बाते आप निःसंकोच लिखते है। कुछ बातो पर किसी की सहमति न बने तो कोइ बात नही । ऐसा स्वाभाविक है। मै संघ विचारधारा से अपने को पूर्ण सहमत पाता हूॅ । क्योकि वर्तमान हालातो मे अपनी पहचान बनाए रखना बहुत जरूरी है। संध को कुछ स्वार्थी तत्व साम्प्रदायिक कहते है किन्तु ऐसा बिल्कुल नही है। जिस प्रकार से इस्लाम इसाई मिस्नरी धर्म परिवर्तन का खेल खेल रही है। उसको रोक रखना भी बहुत जरूरी है। यदि कोई मुसलमान इस्लाम की बात करता है, इसाई इसाई की बात करता है, तो वह साम्प्रदायिक क्यो नहीं कहा जाता? हिन्दू यदि हिन्दू की बात करे तो वह कैसे साम्प्रदायिक हो सकता है? कट्र हिन्दू कभी साम्प्रदायिक नही हो सकता ऐसा मेरा मानना है। सच देखा जाय तो आज हमारा देश चारो तरफ से मुसीबतो से धिरा पडा है। इस्लाम का आतंक कम्युनिष्टो का आतंक जिसे नक्सलाइट भी कहते है, कुछ हिस्सो मे इसाइयो का आतंक है जो आम तौर पर देश विभाजन की पृष्ठभूमि तैयार करने मे लगे है। किन्तु यह सारे संघ की उपस्थिति से भय खाते है। ऐसी स्थिति मे संघ बुरा कैसे हो सकता हैं। हमे इस विचार धारा को समर्थन देना देश की जरूरत है। इसे हमे नही भूलना चाहियें।

उत्तर–आप संघ विचार धारा से ओत प्रोत है। मैं भी जीवन भर संघ परिवार के निकट रहा। मैं बचपन से लेकर आज तक संघ की नीयत पर विश्वास करता हूँ। किन्तु बचपन से लेकर आज तक मैं संघ परिवार की नीतियों से सहमत नही रहा । मैंने अपना पूरा राजनैतिक जीवन जनसंघ और भारतीय जनता पार्टी में ही बिताया किन्तु उस समय भी और आज भी मेरे दो प्रश्नों का उत्तर कभी नही मिला। (1)–मुसलमान, इसाई, साम्यवादी आदि साम्प्रदायिक तत्व हैं यह सही है। हिन्दू भारत में बहुमत में है। क्या हिन्दुओं के पास साम्प्रदायिक होने के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग नही कि वह संख्या बल के आधार पर न स्वंयं साम्प्रदायिक हो न उन्हें इस दिशा में बढ़ने दे। संघ परिवार स्वतंत्रता के पूर्व समान नागरिक संहिता तथा धर्म परिवर्तन करानें पर रोक दो ऐसे शस्त्र थे जो साम्प्रदायिकता पर अंकुश लगा सकते थे और धार्मिक मुसलमानों इसाइयों को इससे विचार प्रसार में कोई दिक्कत नही होती । संघ परिवार ने इस विचार को बीच में ही छोड़कर हिन्दू राष्ट्र ,घर वापसी ,और मंदिर मुद्दे क्यों उठा लिया ? सरकार ने परिवार व्यवस्था को कभी संवैधानिक न मानकर सिर्फ कानूनी माना। संघ परिवार ने कभी परिवार व्यवस्था को संशोधित स्वरुप में संवैधानिक व्यवस्था बनवाने का प्रयत्न क्यों नही किया? अन्य सभी दल व्यक्ति, वर्ण, जाति, धर्म को संविधान सम्मत मानते है। संघ परिवार ने व्यक्ति परिवार गॉव जिले की मुहिम क्यों नही चलाई? अन्य सारे समूह राष्ट्रवाद की चर्चा करते हुए राष्ट्र सर्वोच्च कहते है। संघ परिवार ने राष्ट्र सर्वोच्च के ही पीछे लगना क्यों स्वीकार किया? क्यों नहीं उसने समाज सर्वोच्च का अपना मार्ग पकड़ा ? मेरा दूसरा सवाल है कि स्वतंत्रता के पूर्व संघ एक सांस्कृतिक संगठन तक सीमित था। स्वतंत्रता के तत्काल बाद संघ परिवार सांस्कृतिक जागरण छोड़कर राजनैतिक ध्रुवीकरण में क्यों कूदा? क्या यह कदम गलत नही था? सांस्कृतिक वैचारिक आधार छोंड़कर अपना राजनैतिक दल बनाना क्या ठीक कदम रहा? क्या स्वतंत्र भारत में हिन्दुत्व वैचारिक आधार पर इस्लाम इसाइयत तथा साम्यवाद से नही निपट सकता? जिसके कारण संघ परिवार को वैचारिक संघर्ष का

मार्ग छोड़कर संगठनात्मक संघर्ष का मार्ग पकड़ना पड़ा। मैं तो आज भी आश्वस्त हूॅ कि हिन्दुत्व वैचारिक मार्ग पर बढ़कर ही इन सबको चुनौती देने मे सक्षम है। मै अब भी चाहता हूॅ कि संघ परिवार ने अब तक हिन्दुत्व का जो नुकसान किया है उस आलोक मे संघ अपनी नीतियो पर पुनर्विचार करे।

3 श्री सुनील तामगाडगे 53 राधा कृष्ण नगर हुडकेश्वर रोड नागपुर महा0 440034

श्री आनंद कुमार गुप्त द्वारा लिखी पुस्तक मिली । मेरी समझ मे ये नही आता ये क्या सोचकर रखे है कि छापना मतलब छापना और कुछ भी छापना। यही सोचा होगा शायद आपने जैसा कि आप कहते है कि बजरंग लाल जी को आप बचपन से जानते है उन्होने 55 साल तक कठोर साधना की , विश्व के कई सामाजिक रहस्य सुलझाए । मुनि जी ने धर्म राज्य और समाज की स्पष्ट ब्याख्या की है, दुनिया मे कोई तत्व वेत्ता साधना करके नही पढाई करके तत्व वेत्ता कहलाता है। मेरा पहला सवाल यह हैकि क्या मुनि जी किसी विषय मे पी 0 एच 0 डी0 भी है या नही। क्या आप को नही लगता कि उन्होने अपने 55साल साधना कर बरबाद किए है। विश्व की तो छोडिए भारत के कौन से सामाजिक रहस्य को वे सुलझा पाये है। क्या वे जातियो से धिरे ब्यक्ति को मुक्त करा पाये है, क्या वे धार्मिक अन्धविश्वास को दूर करा पाये है।यदि नही तो कौन सा रहस्य सुलझा पाये है।आप के बजरंग लाल जी धर्म को ईश्वर से मिला कर राजनीति मे प्रयोग किये जो बात गॉधी से चली आयी है। तो बजरंग लाल जी ने कौन सी नई बात की है। राज्य ब्यवस्था मे भागीदारी का सबको समान हक हो यह भी भारतीय संविधान ने अधिकार दिया है। इसपर जैसा चाहिए वैसा अमल नही हो रहा है, पर आप के मन मुताबिक तो उच्चवर्ण वाले राज्यसत्ता संभाल ही रहे है,फिर चिल्ला क्यो रहे हो।समाज मे जो अनुशासन होते है उनका सबंध नैतिकता से होता है। जिसे आप की सामाजिक ब्यवस्था ने धर्म से जोड कर नैतिकता की धज्जियॉ उडा दी है। सब कुछ आप के मुताबिक ही हो रहा है फिर भी आप को संविधान से और उसके निर्माता से ही शिकायत है । अरे भाई ऐसा है तो खुद बनो डा. ऑफ लॉ और बनाओ अपना संविधान और चालु कर दो उस संविधान को।

4 श्री शिवदत्त बाघा, बांदा उत्तर प्रदेश 210203

मैंने भी आनंद गुप्त की किताब पढी है। (श्री बजरंग मुनि) नाम के साथ 'अग्रवाल' उप नाम जुडा हुआ देख रहा हूॅ। उन्हे बजरंग मुनी भी पढ रहा हूॅ। वह 2008 से बानप्रस्थी है। इसमे सच क्या है।

मनुवाद एक समय सामाजिक व राज्य ब्यवस्था थी । अपना अपना क्षेत्र अपना अपना कर्म था। स्व धर्म कर्म ही श्रेयस्कर था।कर्म या धन्धे का अतिक्रमण वर्जित था यानी बहु धन्धे पर रोक थी ।इसलिए बेरोजगारी बेकारी नही थी। हजारो वर्षो तक ये ब्यवस्था चली और भारत सोने की चिडिया कहलाया ।कही कोई समस्या नही।

इस्लामी और अंग्रजी शासन मे भारत की जतीय ब्यवस्था का रूपान्तरण हो गया और वर्गीय ब्यवस्था का जन्म हो गया। श्रमिक वर्ग किसान वर्ग ब्यवसायी वर्ग । बहु धन्धे का चलन चल निकला ,कर्म श्रेत्र का अतिकमण हुआ । समस्यायें बढी बेरोजगारी बेकारी खडी हों गयी।अमीर गरीब शोषक शोषितपैदा हुए और इन्ही को लेकर अनेक वादों साम्यवाद समाजवाद नक्सलवाद हिसावाद का भी जन्म हुआ। इसप्रकार मनुष्य व समाज की जटिलताए बढती गयी। इस्लाम और अंग्रजी साम्राज्य वाद का साया अपने देश व अन्य कतिपय मुल्को से उठाने के बाद गणीतिय शासन ब्यवस्था का जन्म हुआ।इसमे जातिवादी व वर्गीय सामाजिक ब्यवस्था का धालमेल हुआ जो संसार की अब तक की सबसे निकट एवं मानव के लिये कष्टकारी भेदभाव वाली शासन ब्यवस्था के रूप मे हमारे सामने है। इसके ब्यवस्था होने मे भी प्रश्न चिन्ह है।क्योंकि यह स्वयं एक समस्या बनकर अनेक हिंसक अराजक आपराधिक समस्याओ की जननी है। ऐसी शासन ब्यवस्था का एक दस्तावेज है खुद के फायदे में। ज्ञान तत्व के आखरी पेज के बाहरी भाग में दर्ज इबारत मुझे हार्दिक कष्ट पहुचाती है।

उत्तर– आनंद कुमार गुप्त द्वारा लिखित पुस्तक पर अनेक विचार पक्ष विपक्ष मे प्राप्त हुए। दो पत्र यहां उधृत है। श्री सुनील भाई ने बहुत आवेश मे पत्र लिखा है। लगता है कि उन्हे संविधान निर्माता का एकमात्र पद अम्बेडकर जी के पास से खिसकने का भय हुआ जब कि ऐसी कोई बात नही है। न ही अम्बेडकर जी भारत के पहले संविधान निर्माता थे और न ही अन्तिम । अतः इस तरह नाराज होना अच्छी आदत नही। फिर भी आपने पत्र लिखा यह भी प्रशंसनीय कदम है। इसी बहाने एक दूसरे के विचारो का आदान प्रदान होता है। पी एच डी की डिग्री शिक्षा के लिये एक मात्र मापदण्ड है ज्ञान का मापदण्ड नही। कबीर दास बिना पी एच डी वाले अशिक्षित ज्ञानी थे और अम्बेडकर जी उच्च शिक्षित अल्प ज्ञानी। कबीर दास को समाज शास्त्र का अधिक ज्ञान था कानून का कम । अम्बेडकर जी को कानून का अधिक ज्ञान था समाज व्यवस्था का कम। संविधान के मूल तत्व समाज शास्त्रियों को बनाना चाहिये था और भाषा कानूनविदो को देनी थी किन्तु हुआ इसका ठीक उल्टा। आनंद जी ने मुझे कहीं भी उच्च शिक्षित नही लिखा है । मैने भारत का वर्तमान संविधान कई बार पढा। मुझे विश्वास नही होता कि अम्बेडकर जी सरीखे विद्वान ने इतना घटिया संविधान लिखा होगा । संभव है कि उन्होने अन्य लोगो के दबाव मे समझौते किये हो ।

भारतीय संविधान निर्माताओ ने श्रम और बुद्धि की तुलना मे श्रम के साथ बहुत छल किया। उन्होने श्रमजीवी अवर्णो या शुद्रो को भगवान भरोसे छोड दिया। दुनियां जानती है कि भारत मे अवर्णो तथा शूद्रो का नब्बे प्रतिशत श्रमजीवी है। यदि अम्बेडकर संविधान निर्माता होते तो मुठ्ठी भर अवर्णो शूद्रो को आरक्षण का लाभ दिलाकर शेष श्रमजीवियों को इन बुद्धिजीवी भूखे भेडिये के समान अवर्णो के भरोसे नही छोड देते। इनका तो पेट कभी भरता ही नही। जगजीवन राम, मायावती, राम विलास पासवान सरीखे लोग भी अन्य अवर्णो के लिये अपनी पहचान छोडने को तैयार नही। बाबा साहब होते तो ऐसा अन्याय नही होने देते । इसलिये मै कह सकता हूॅ कि यह संविधान बाबा साहब का बनाया हुआ न होकर निश्चित ही पण्डित नेहरू का होगा जिन पर पश्चिमीकरण का भूत सवार था।

श्री शिवदत्त जी ने अग्रवाल शब्द से उठे भ्रम पर पूछा है । श्री आनंद गुप्त की लिखी पुस्तक करीब दस वर्ष पूर्व की है जब मैने वानप्रस्थ नही लिया था। मेरा नाम अग्रवाल से मुनि वानप्रस्थ के बाद हुआ। प्रचीन मनुवादी व्यवस्था मे अनेक अच्छाइयां भी थी और अनेक बुराइयां भी थी जिसे किसी न किसी रूप मे बदला जाना चाहिये। अवर्ण होने के बाद उसका कभी वर्ण संशोधन न होना तो भारी अन्याय अत्याचार था। इस अत्याचार का समर्थन किसी भी रूप मे नही किया जा सकता चाहे उससे कितना भी लाभ क्यो न हो । न सभी पुराने का आख बंद करके समर्थन संभव है न ही आंख बंद करके विरोध । आंख खोलकर नये पुराने की समीक्षा करते हुए ही मार्ग तलाशना चाहिये।

ज्ञान तत्व के अन्तिम पृष्ठ पर छपी छ लाइने आपको बहुत कष्ट देती है। कष्ट स्वाभाविक है। आप स्पष्ट लिखिये कि उसमे क्या गलत है। यदि सच बोलने से आपको कष्ट होता है तो मेरे सामने भी संकट है कि सच को छुपाने से मुझे कष्ट होता है। अच्छा हो कि हम आप चर्चा करके तय कर ले कि सच क्या है। मै कोई अरविन्द केजरीवाल या अन्ना हजारे तो हूॅ नही जो संसद को एक मंदिर कह दूॅ। मै तो उसे जेलखाना पहले भी मानता था और अब भी मानता हूॅ अच्छा हो कि आप कष्ट मे रहने की अपेक्षा अपने विचार भेंजे।

5श्री विजय सिंह बनकर बल्लारपुर महाराष्ट्र

प्रश्न– मंहगाई के विचार से मै आपसे सहमत हूॅ लेकिन मजदूरी के भाव बढने मे और डीजल पेट्रोल के रेट बढने मे क्या संबंध है। यह समझ नही पाया । मुझे लगता है कि इसका संबंध रोजगार के साधन बढने से है। आंबेडकर जी के बारे मे प्रकाशित आपके विचार से मै असहमत हूॅ । आंबेडकर जी ने कभी भी मुस्लिम धर्म मे जाने की बात नही की या कभी चर्चा भी नही की । अम्बेडकर जी ने धर्म परिवर्तन के समय सभी बातो को ध्यान रखा जो राष्ट्र हित मे है। गांधी जी को समझने मे अंबेडकर जी जरूर चूक गये। अब देश निश्चित ही बहुत ही विदारक स्थिति मे आ गया है। समाज कर्मी भी एक नही हो

सकते। कांग्रेस ने गांधी जी के नाम का इतना दुरूपयोग किया है कि दुनियां मे किसी भी महापुरूष के नाम का इतना दुरूपयोग नही हुआ होगा। कांग्रेस का नाम इसलिये गिनीज बुक मे दर्ज कराने की मुहिम देश भर मे छेडी जाय। यह देश के सामने सबसे बडा शुरूवाती काम है कि सामान्य जन यह समझे कि गांधी ओर कांग्रेस का कोई संबंध नही। जयपुर शिविर मे राहुल गांधी अब भी दुहाई दे रहा है कि कांग्रेस गांधी की है। अब भी अपने स्वार्थ के लिये गांधी विचार को निचोडने का काम कांग्रेस कर रही है। देश का युवा गांधी को समझना चाहता है नही तो लगे रहो मुन्ना भाई नही चली होती । सर्वोदय विचार व्यापकता के साथ युवाओ के सामने आयें । राहुल गांधी मे इतनी समझ नही है कि वे युवाओ के आदर्श के रूप मे अपनी छवि बना सके। नही तो उनके कदम लाल बहादुर शास्त्री के कदम ताल से मिलते हुए दिखते । आप अपने पाक्षिक से हिन्दी को ज्ञान भाषा बनाने की मुहिम भी छेडे। आपको नियमित रूप से लिखते रहूॅगा।

उत्तर– आपने पेट्रोल से मानवश्रम को जोडने पर प्रश्न उठाया है। सच्चाई यह है कि कृत्रिम उर्जा मानवश्रम तथा पशु श्रम के विकल्प के रूप मे उपयोग मे आती है। कृत्रिम उर्जा मानव श्रम का शोषण करती हैं। समाज मे दो समूह है 1 श्रम खरीदने वाला और 2 श्रम बेचने वाला । यदि श्रम खरीदने वाले को कृत्रिम उर्जा मंहगी मिलेगी तो स्वाभाविक है कि वह कुछ प्रतिशत मे मानव श्रम खरीदने को मजबूर हो। स्वाभाविक है कि रोजगार के अवसर अपने आप बढेगे। इससे आवागमन मंहगा होगा। स्वाभाविक है कि कुल आवागमन मे दस पंद्रह प्रतिशत की कमी हो । पशुओ का उपयोग भी बढेगा। आपने अम्बेडकर जी के गांधी जी से मुसलमान बनने के प्रस्ताव को असत्य बताया । मैने यह बात किसी जिम्मेदार व्यक्ति के कथन से मान ली थी और मैने लिख दिया था । मुझे अपने कथन की सत्यता का कोई प्रमाण नही मिला। मै आपको आश्वस्त करता हूॅ कि यह बात भविष्य मे न लिखूंगा न बोलूंगा। इसके लिये मै क्षमा प्रार्थी हूॅ। आपने बहुत अच्छा किया जो मुझे इस अप्रामाणिक कथन की जानकारी दी। मै भविष्य मे भी आपसे ऐसी ही स्पष्ट समीक्षा की उम्मीद रखूंगा।

कांग्रेस ने गांधी के नाम का दुरूपयोग किया यह सच है किन्तु यह भी तो सच है कि कोई अन्य सच्चाई को सामने लाने वाला नही था। विपक्षी दल तो कांग्रेस की अपेक्षा ज्यादा गये बीते दिखे जो गांधी के विचारो ंका ही खुला विरोध करते रहे। भारतीय जनता पार्टी जिस तरह गांधी की जगह हिटलर को आदर्श मान रही है। वह भी कोई अच्छी बात नही । राहुल गांधी मे राजनैतिक प्रशासनिक समझ का अभाव है। ले देकर मनमोहन सिंह ही दिखते है। देखिये अगले चुनाव मे क्या होता है। आपकी सलाह हिन्दी को राजभाषा बनाने की मुहिम की है। मै लोक संसद की मुहिम का ज्यादा पक्षधर हूॅ।